The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 2 | Issue 2 | February 2024
ISSN: 2583-973X
Website: www.theacademic.in

लोक चिकित्सा पद्धति: एक मानवशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

महेंद्र कुमार जायसवाल

शोधार्थी, मानवविज्ञान विभाग

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, (महाराष्ट्र)

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Keywords :
देवी-देवता, अलौकिक विश्वास, धार्मिक मान्यताएँ, जादू-टोना, झाड़-फूँक, तंत्र-मंत्र, लोक उपचार

ABSTRACT

बाह्य चिकित्सा की बढ़ती लोकप्रियता के दौर में भी विश्व स्वास्थ्य संगठन, भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद, राष्ट्रीय जनजाति स्वास्थ्य अनुसंधान संस्थान, आयुष मंत्रालय आदि उच्च चिकित्सीय संस्थान लोक चिकित्सा पद्धति पर अपना ध्यान केंद्रित किया है। वही लोक जन तक चिकित्सा को पहुंचाने के लिए पूर्वोत्तर लोक चिकित्सा संस्थान के तहत लोक चिकित्सा को ज्ञान के सभी पहलुओं पर अनुसंधान हेतु विकसित किया जा रहा है। वही भारत के माननीय निवर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने जामनगर, गुजरात में अप्रैल 2022 में पारंपरिक चिकित्सा को वैश्विक केंद्र के रूप में उद्घाटन किया है। पारंपरिक चिकित्सा की दुनिया में यह बड़ा कदम माना जा रहा है और भारत इसका अगुआ बनकर उभरा है। हमारी आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति विश्व की प्राचीनतम चिकित्सा पद्धतियों में से एक है और अब यह अन्य देशों की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों के साथ वैश्विक स्वास्थ्य कल्याण की दिशा में सकारात्मक कार्य करने की ओर आगे बढ़ रहा है (आयुष प्रतिवेदन, 2023)। देश की स्वास्थ्य नीतियों (1983) में पारंपरिक चिकित्सा और दाई इत्यादि के ज्ञान को भी विशेष रूप से प्राथमिकता दी गई है। साथ ही राष्ट्रीय दवा नीतियों में लोक चिकित्सीय ज्ञान को शामिल करने का आग्रह भी किया गया हैं। स्वास्थ्य नीति (2017) में परंपरागत चिकित्सा को इस नीति का एक प्रमुख हिस्सा माना है। इस नीति में विशेष रूप से इस बात पर बल दिया गया है कि नवीन एवं पारंपरिक या लोक चिकित्सा

Corresponding Author: mahendrajaiswal712@gmail.com

पद्धतियों को समान रूप से महत्व देना होगा। यह चिकित्सा पद्धति धीरे-धीरे लुप्त हो रहा है, इसे संरक्षित किया जाना अति आवश्यक है।

लोक समाज एवं जनजातीय समुदायों में लोक औषधि की परंपरा का एक लंबा इतिहास रहा है और प्राचीन काल से ही किसी न किसी रूप में इस लोक चिकित्सा का अभ्यास किया जाता रहा हैं। दुनिया भर में मानवजाति ने हमेशा से ही अपने स्वास्थ्य के रखरखाव और बीमारियों के नियंत्रण से संबंधित अनेकों चुनौतियों का सामना किया है और बीमारियों की व्याख्या और उपचार उनके सांस्कृतिक ढांचे के अनुसार करता रहा है। लोक समुदाय ने स्वास्थ्य देखभाल एवं चिकित्सा पद्धतियों की अलग-अलग क़िस्मों को विकसित किया है। इस संबंध में फोस्टर (1978) का मत है कि लोक समुदाय बीमारियों के उपचार हेतु कोई न कोई चिकित्सा पद्धति विकसित कर लेती हैं। साथ ही यह लोक समुदाय सामाजिक संस्थाओं के स्वरूप व सांस्कृतिक परंपराएँ अपनी स्वास्थ्य स्तर ऊँचा उठाने हेतु विशिष्ट व्यवहार व ज्ञान का विकास भी कर लेती हैं, जिन्हें लोक चिकित्सा के रूप में देखा जाता है। लोक समाज स्वास्थ्य एवं रोग को अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक, पारिस्थितिकी एवं स्थानीय बोली और पर्यावरण के आधार पर परिभाषित करता रहा है। लोक चिकित्सा को परिभाषित करते हुए रिवर्स (1924) ने अपनी पुस्तक *'मेडिसिन, मैजिक और रिलीजन'* में स्पष्ट किया है कि लोक चिकित्सा कई मानव पीढ़ियों के द्वारा विकसित वे प्रणालियाँ होती है, जिनके प्रयोग बाह्य चिकित्सा से भिन्न, शारीरिक, मानसिक, रोग की पहचान और उसके निवारण की प्रक्रिया देशज तरीके से अपनाई जाती है। इसी संदर्भ में ह्युग्स (1968) कहते हैं कि बीमारी से संबंधित वे मान्यताएं और प्रक्रियाएं जो कि स्वदेशी सांस्कृतिक विकास का परिणाम हैं और बाह्य चिकित्सा उपचार पद्धति से भिन्न होता है, लोक चिकित्सा कहलाता है। यह पादप, जैव, व अलौकिक तथ्यों पर आधारित माना जाता है। जिनका प्रयोग सामाजिक-सांस्कृतिक व पर्यावरण में तालमेल के साथ संपन्न किया जाता है। इस संबंध में मानववैज्ञानिक लेबान एवं क्लिमेंट्स (1973) का मानना है कि प्रत्येक जनजाति समूह अपनी पारिस्थितिकी के अनुसार बीमारियों को परिभाषित करती है और उसी के अनुरूप बीमारी का उपचार भी करती है। वही एकरनैक्ट (1942) का मानना है कि लोक चिकित्सक अलौकिक शक्तियों को प्रसन्न करते हुए रोगों का उपचार करते हैं। जहां तक अलौकिक कारणों का प्रश्न है? तो सरल समाज में चिकित्सा विधान अलौकिक शक्ति या घटनाओं की व्याख्या करने की प्रवृत्ति पर आधारित होती है, क्योंकि यह बाह्य चिकित्सा से भिन्न होता है। यह सांस्कृतिक पक्ष पर जोर देती है। इसमें लोक समाज का धार्मिक विश्वास एवं अलौकिक पक्ष सम्मिलित होता है, अर्थात यह संस्कृति से प्रभावित होती है।

फोस्टर और एंडरसन (1978) द्वारा लोक चिकित्सा को 'वैयक्तिक' *(Personalistic)* एवं चिकित्सा प्रणाली को 'प्राकृतिक' *(Naturalistic)* पद्धति में वर्गीकृत किया है। वैयक्तिक लोक चिकित्सा का ही दूसरा नाम है। वैयक्तिक उपचार प्रणाली में माना जाता है कि सांस्कृतिक रूग्णता *(इलनेस)* की उत्पत्ति किसी संवेदनशील तत्वों के क्रियाशील और उद्देश्यपूर्ण हस्तक्षेप से होती है। यह विश्वास तत्व अलौकिक (देवी-देवता), अमानवीय (प्रेतात्मा, दुष्ट आत्मा, पूर्वज) अथवा मानवीय (डायन या जादूगर) तत्व हो सकते है। वैयक्तिक चिकित्सा में बीमार व्यक्ति स्वयं आक्रमण का शिकार हो जाता है। इसके विपरीत प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में वैज्ञानिक पद्धति को आधार समझा जाता है। यह संतुलन मॉडल के अनुरूप है। जैसे स्वस्थ की अवस्था तब होती है, जब शरीर के असंवेदनशील तत्वों जैसे वात, पित्त, कफ व गर्म एवं शीतल में संतुलन हो। यह संतुलन व्यक्ति के उम्र और उसकी प्राकृतिक तथा सामाजिक वातावरण की अवस्था पर निर्भर करता है। जब यह संतुलन बिगड़ता है, तो व्यक्ति बीमार हो जाता है। वैयक्तिक प्रणाली में परस्पर यह देखा जाता है कि अधिकतर लोग किसी एक प्रणाली के वर्णनात्मक सिद्धांत में विश्वास रखते है और उसी के आधार पर बीमारी का उपचार करते है ।

लोक चिकित्सा पद्धति को ज्ञान, विश्वासों और अभ्यासों के सामंजस्य के रूप में देखा जा सकता है जिसे स्वास्थ्य के रखरखाव, बीमारियों की रोकथाम और रोग के उपचार के लिए विकसित किया गया है। लोक चिकित्सा विशेष तौर पर लोक समाज एवं जनजातीय समुदायों में अलिखित स्वरूप व मौखिक परंपरा के रूप में देखने को मिलता है। लोक चिकित्सा को समुदाय द्वारा मान्यता प्राप्त सामाजिक चिकित्सा के रूप में देखा जा सकता है, जो लोक-परंपराओं के माध्यम से विभिन्न धार्मिक विश्वासों एवं रीति-रिवाजों, अनुष्ठानों, निषेधों, टोटम, प्रथाओं व मान्यताओं आदि के द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में सौंपने की परंपरा दिखाई देती है। यह लोक समुदाय के सदस्यों के सामूहिक स्मरण के द्वारा संचालित होता है, इसीलिए इसे 'मौखिक संस्कृति' के रूप में देखा जाता है। इस संदर्भ में फ्रांज बोआस (1888) ने *'सेंट्रल एस्किमो'* पुस्तक में मौखिक परंपरा वाले जनजाति समाजों का अलिखित ऐतिहासिक वर्णन किया है। जिसमें जादू, लोक उपचार, रीति-रिवाज, परंपरा आदि पर गहरी सूचना एकत्रित की है। उन्होने नई पीढ़ी के बौद्धिक लाभ के लिए लोक ज्ञान को संरक्षित रखने की आवश्यकता पर बल दिया है।

लोक समाज एवं जनजाति समाजों में प्रचलित सामाजिक-सांस्कृतिक एवं धार्मिक मान्यताओं, रीति-रिवाजों, प्रथाओं, परंपराओं और जादू-टोना एवं लोक चिकित्सा मानवशास्त्रियों के लिए बड़ी ही जिज्ञासा व उत्सुकता के विषय रहे हैं। मानवशास्त्रीय रिवर्स (1924) का मानना है कि किसी भी लोक समुदाय या जनजाति की मानवजातिवर्णन लेते समय जब

संस्कृति का विवरण दिया जाता है, तो उसमें धार्मिक संबंधी तथ्यों जैसे कि उनके धर्म एवं जादुई क्रियाओं को सम्मिलित किया जाना अत्यंत आवश्यक है। किसी भी समाज में जो चिकित्सा करने की सामाजिक विधि है, वह चाहे शमन हो या जादुई क्रियाएं इनका अपना अलग तर्क और पद्धति है, जो बहुत ही योजनबद्ध तरीकों एवं विचारों पर कार्य करती है। इन तथ्यों के आधार पर मानवशास्त्रियों ने आदिम समाजों का अध्ययन किया है। जिसके अंतर्गत समाज के लोगों के खान-पान उनके द्वारा प्रयोग की जाने वाली जड़ी-बूटियाँ व जादुई क्रियाओं का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला है कि बीमारी केवल शारीरिक ही नहीं, सांस्कृतिक भी है। बीमारियों के उपचार का संबंध उस समाज की संस्कृति से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है, क्योंकि इन लोक समाजों में दवा संबंधी सामाग्री और उनका उपचार दोनों ही संस्कृति से संबंधित है। इसके अतिरिक्त वनस्पति से जुड़ी चिकित्सा का आधार केवल जंगल से ही नहीं है बल्कि विश्वासों से भी है। इसलिए पहले उन विश्वासों को समझना आवश्यक है, जो सिर्फ संस्कृति के अध्ययन से ही ज्ञात हो सकते है। फैबरेगा (1971) ने बीमारी शब्द का प्रयोग 'रूग्णता' *(इलनेस)* के सांस्कृतिक अध्ययन के लिए किया है। जिसमें रुग्णता की उत्पत्ति, प्रक्रिया, विशेषताएँ, उपचार और समाधान एवं रुग्णता का अध्ययन सांस्कृतिक घटना के रूप में करना है। इसलिए संस्कृति को समझना अति आवश्यक है। यदि हम लोक चिकित्सा व्यवहारों को समझना चाहते है, तो उनकी संस्कृति व धार्मिक दृष्टिकोणों को समझना होगा।

टायलर महोदय ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *'प्रिमिटिव कल्चर'*) 1871 में जनजातीय धर्म को (अति सरल शब्दों में परिभाषित करते हुए कहते है कि 'धर्म आत्मा या आध्यात्मिक शक्ति में विश्वास है' इन्होने आदिम धर्म की उत्पत्ति आत्मा में विश्वास के आधार पर माना है। इस सिद्धांत को 'आत्मवाद' के रूप में जाना जाता है। आत्मवाद धर्म का आरंभिक स्वरूप रहा है। आदिम समुदाय के लोगों में पूर्वज आत्माएँ अनेक थी, जिनकी पूजा अनेक अवसरों पर पूर्वजपूजा के रूप में की जाती थी-, इसलिए लोगों का विश्वास बहुलदेववाद के रूप में हुई। आदिम लोगों ने आत्मा को किसी व्यक्ति को मृतक बनाते हुए या जीवित करते हुए देखा होगा और धीरे धीरे लोगों में यह विश्वास उत्पन्न हुआ-होगा कि प्रत्येक व्यक्ति के अंदर एक अदृश्य शक्ति है जिसे लोगों ने आत्मा की संज्ञा दी है। यह अदृश्य आत्मा किसी मनुष्य के शरीर से बाहर निकल जाती है, तो वह मनुष्य मृतक में बदल जाता है। इस प्रकार से आदिम लोगों के अंदर आत्मा में विश्वास में गहरा हो गया। इस तर्क के आधार पर टायलर ने आदिम मनुष्यों को 'जंगली दार्शनिक' भी कहा है। आदिम धर्म के विकास के संबंध में दूसरी विशेषता 'प्रेतात्मा का अवतार' है। इस विश्वास के फलस्वरूप 'प्रेतात्माअधिपत्य-' की अवधारणा आदिम जातियों में विकसित हुई। इस अवधारणा के कारण झाड़-फूँक उपचार विधि को दुष्ट आत्माओं को भगाने के लिए व्यवहार में लाया जाता था। -फूँक उपचार का विकास हुआ। इस झाड़

ओझा प्रेतात्माओं को मनाकर, मन्नत व उपहार देकर या बलि देकर उनकी नाराजगी दूर करके पीड़ित व्यक्ति को उससे छुटकारा दिलवाते थे।

जनजातीय समुदायों में रोग की अवधारणा सामाजिक-सांस्कृतिक, धार्मिक और परिस्थितिकी विभिन्नता के कारण भिन्न-भिन्न देखने को मिलता है। लोक समाजों एवं जनजाति समुदायों में अलौकिक आत्माओं को खुश करने के लिए और उनके प्रकोप से बचने के लिए कई प्रकार के अनुष्ठान और कर्मकांड संपन्न करने का उदाहरण मिलता है। मध्य प्रदेश के उत्तरी क्षेत्र में पाई जाने वाली सहरिया जनजाति में किसी व्यक्ति को क्षय रोग होने पर मानवीय क्रियाओं *(टोना-टोटका)* को उत्तरदायी माना जाता है। भारिया जनजाति की धार्मिक मान्यताओं में पाया गया है कि यदि शीतला माता किसी कारणवश नाराज़ हो जाए तो उनका प्रकोप चेचक या माता के रूप में गाँव वालों के सामने आता हैं। बुक्सा जनजाति में इसे 'ओपरा' या 'ऊपरी छाया' के रूप में देखा जाता है। इसी प्रकार कई अन्य बीमारियों का संबंध स्थानीय देवी-देवताओं से होता है, जैसे कोरकू जनजाति में मोती माता के क्रोधित होने से चेचक (माता रोग) का होना, देव की नाराजगी से गाँव में महामारी फैलना, ढ़ोर देव की अवहेलना से गाँव में पशुओं के खुरों में कीड़े पड़ना माना जाता है। कोरकू जनजातियों का मानना है कि इस रुग्णता के पीछे किसी अलौकिक शक्ति का हाथ माना जाता है, तो यह तकलीफ़ देवी-देवताओं की नाराजगी की वजह से हो रही है। इस तरह से लोक चिकित्सा में रुग्णता देखने को मिलते है। क्लिमेंट्स ने देवी-देवताओं की नाराजगी, पूर्वजों का निरादर, भूत-प्रेतों, जादू-टोनों , बाहरी हवा (ऊपरी छाया) एवं बुरी नजर को रुग्णता का प्रमुख कारण माना है।

रुडोल्फ विको (Rudolf Virchow, 1848) ने सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों को रोग के कारणों के लिए उत्तरदायी माना है। लोक समुदाय स्वास्थ्य की व्याख्या अलग-अलग तरीके से करता आ रहा है, क्योंकि इसके साथ-साथ उस समाज विशेष की सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य जुड़े होते हैं। लोक चिकित्सा पद्धति में समाज का सांस्कृतिक और धार्मिक विश्वास एवं अलौकिक पक्ष सम्मिलित होता है। जैसे मणिपुर की मीतई, नागा और कूकी-चिन जनजातियों में अलौकिक आत्माओं को खुश करने के लिए और उनके प्रकोप से बचने के लिए कई प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान और कर्मकांड संपन्न करती है, जिसमें पारंपरिक चिकित्सकों की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण होती है। बीमारी की अवस्था में रोगी डॉक्टर के पास जाकर इलाज़ करवाता है। यदि रोगी को विश्वास हो जाए कि उसके ऊपर 'ओपरा' किया गया है, तो वह स्थानीय लोक चिकित्सक के पास जाकर ही अपना उपचार करवाता है। लोक चिकित्सा प्रणाली में मंत्र, जादुई कृत्य, अलौकिक और धार्मिक अनुष्ठान आदि संपन्न किया जाता है। कभी-कभी औषधि का स्वरूप तर्क से परे, लेकिन प्रभावी देखने को मिलता है। लोक चिकित्सा पद्धति में

रुग्णता की उत्पत्ति अलौकिक कार्यों से है जिनका हम प्रत्यक्ष रूप से अवलोकन नहीं कर सकते है। जादू-टोना, दुष्ट आत्मा की प्रविष्टि, चुड़ैल, बुरी नज़र आदि अलौकिक क्रिया-कलापों के अंतर्गत आती है। अलौकिक शब्द का संबंध 'प्रकृति से परे' की अस्तित्व व्यवस्था से है, जिसमें देवी-देवता, भूत-प्रेत और अभौतिक तत्व आते है।

एकरनैक्ट (1942) ने अपनी पुस्तक *'मटेरियल मेजिका'* में आदिम चिकित्सा को 'जादू चिकित्सा' की संज्ञा दी है। उनका मानना है कि जहां तक अलौकिक कारणों का प्रश्न है, तो सरल समाज में चिकित्सा विधान अलौकिक शक्ति या घटनाओं की व्याख्या करने की प्रवृत्ति पर आधारित है, जैसे यह बाह्य चिकित्सा से भिन्न होता है। यह धार्मिक पक्ष पर ज़ोर देती है। इसमें समाज का सांस्कृतिक पक्ष सम्मिलित होता है। रोगी के स्वस्थ होने पर शराब, चिलम-गांजा, अंडा, मुर्गा, बकरा आदि श्रद्धा स्वरूप अर्पित किया जाता है। शर्मा (2012) का कहना है कि मध्यप्रदेश के पातालकोट क्षेत्र में निवास करने वाली भारिया जनजाति में 'भुमका' परंपरागत चिकित्सक के रूप में रोगी के अधिक गंभीर या आवश्यकता महसूस करने पर औषधि प्रदान करने के साथ ही 'गड़ुवा पानी' व 'दाना-मुट्ठी' नामक कृत्य मंत्रों के रूप में संपन्न करते है। मंत्रों के अतिरिक्त अनेकों अलौकिक कृत्य, जादू-टोने स्वास्थ्य लाभ हेतु संपन्न करते हैं। इस तरह अनेकों अलौकिक कृत्य, जादू-टोने व मंत्रों का उपयोग लोक चिकित्सा में प्रचलित पाये जाते हैं। वही सर्पदंश, बिच्छू दंश व गलसुये आदि के निदान हेतु औषधियों व मंत्रों का प्रयोग अलौकिक कृत्यों के रूप में करती है। औषधि के रूप में पढ़ार की छाल अथवा बीज, बंदरसीटी के पौधे, किवाच के बीज, कड़ूपाठ की जड़ आदि पीसकर खिलाए व लगाए जाते हैं। कभी-कभी जंगली कुंदरू के फल पीसकर खिलाने व लगाने से मंत्रों के साथ लाभ देखने को मिलता है। इस तरह से मंत्रों का प्रयोग औषधि के साथ अथवा अलग से भी संपन्न किया जाता है। अतः परंपरागत चिकित्सक की भूमिका लोक औषधि के संदर्भ में अति महत्त्वपूर्ण होती है।

लोक चिकित्सा के प्रयोग व संपादन हेतु उपचार विशेषज्ञ लगभग प्रत्येक लोक समाज व जनजातीय समुदायों में देखने को मिलते हैं। लोक चिकित्सीय विशेषज्ञों को जनजातियों में अलग-अलग नामों से संबोधित किया जाता है। जैसे कि महाराष्ट्र की कोरकू जनजाति में लोक चिकित्सकों को 'पड़ियार' और कोलाम जनजाति में 'वैदु' कहा जाता है। मध्य प्रदेश की बैगा जनजाति में 'ओझा' व 'गुनिया', भारिया जनजाति में 'भुमका', सहरिया जनजाति में "सियाने" कहा जाता है। उत्तर प्रदेश व उत्तराखंड में पायी जाने वाली जनजातियों में से थारु जनजाति में लोक चिकित्सक को 'भर्रा', बुक्सा जनजाति में 'सयाना' एवं जौनसरी-बाबर जनजाति में 'महेश्वर' के रूप जाना जाता है। हिमाचल प्रदेश की गद्दी जनजाति में लोक चिकित्सक को 'चेला', उड़ीसा के पहाड़ी सौरा जनजाति में 'शमन', झारखंड के ओरांव जनजाति में 'भगत, पाहन, एवं भक्तिन', छत्तीसगढ़ के पहाड़ी

कोरवा जनजाति में 'देवाईर' व गोंड जनजाति में 'बुम गायता' आदि लोक उपचार विशेषज्ञों को अलग-अलग जनजातियों में विभिन्न नामों से जाना जाता हैं।

उपसंहार

लोक चिकित्सा से संबंधित साहित्य पुनरावलोकन की विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि बीमारी का कोई न कोई कारण व्यक्ति, तर्क अथवा बुद्धि के माध्यम से प्रस्तुत करता है और समाज विशेष में बीमारी के प्रकार व गंभीरता को दैवीय प्रकोप आदि से समान्यतया संलग्न किया जाता है। मृतकों व पूर्वजों का निरादर, किसी स्थान विशेष अथवा आत्मा की अवहेलना, गलत खान-पान, नज़र लगना, किसी से जादू-टोने होने का भय आदि बीमारी के कारण दर्शाए जाते हैं। अपनी विश्व दृष्टि की सीमा के अंदर जनजातीयां विभिन्न प्रकार के रोगों की पहचान और उनका वर्गीकरण करती है। जनजातीय समाज में व्यक्तियों और समुदाय का भाग्य अनदेखी शक्तियों के साथ उनके संबंधों पर निर्भर करता है। जनजातीय संस्कृति में एक सामान्य अवधारणा यह भी देखने को मिलता है कि पूर्वजों की आत्माएं परिवार एवं समुदाय की समृद्धि और खुशहाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लोक चिकित्सा पद्धति में समाज का सांस्कृतिक और धार्मिक विश्वास एवं अलौकिक पक्ष सम्मिलित होता है। जनजातियों में अलौकिक आत्माओं को खुश करने के लिए और उनके प्रकोप से बचने के लिए कई प्रकार के अनुष्ठान और कर्मकांड संपन्न किए जाते हैं, जिसमें लोक चिकित्सकों की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण होती है।

भारत के जनजातीय समुदायों में रोग की अवधारणा सामाजिक, सांस्कृतिक धार्मिक-और परिस्थितिकी विभिन्नता के कारण भिन्न-भिन्न देखने को मिलती है, जैसे कि गर्म क्षेत्रों में ठंडे क्षेत्रों की अपेक्षा मलेरिया अधिक फैलता है यह एक पारिस्थितिक कारण है। मध्य प्रदेश के उत्तरी क्षेत्र में पाई जाने वाली सहरिया जनजाति में किसी व्यक्ति को क्षय रोग होने पर टोना-टोटका को उत्तरदायी माना जाता है। इसके अलावा जैविक कारक, पारिस्थितिकीय *)इकोलॉजिकल(* कारक, आर्थिक व राजनैतिक कारकों के स्वास्थ्य पर प्रभाव को सम्मिलित करते हुए समग्रता से उनका अध्ययन करने का प्रयास करते है। इसके अतिरिक्त उपचार हेतु प्रयोग में लाए जाने वाले धार्मिकजादुई विधियां-, घरेलू औषधीय नुस्खे, जैवचिकित्सा के जैविक एवं -चिकित्सक एवं रोगी के आपसी संबंध -सामाजिक स्वास्थ्य प्रणाली जैसे, जैवसांस्कृतिक उपार्जन व अनुकूलन-, लोक चिकित्सा, पारंपरिक चिकित्सा आदि हर उस आयाम का विश्लेषण किया है जिसका संबंध मनुष्य के स्वास्थ्य एवं उपचार से होता है।

संदर्भ-सूची *(References)*

- Ackerknecht, E. H. (1942a). Problems of Primitive Medicine. *Bulletin of the History of Medicine*, *11*(1), 503-521.
- Ackerknecht, E. H. (1942b). Primitive Medicine and Culture Pattern. *Bulletin of the History of Medicine, 12*(2), 545-574.
- Boas, F. (1888). *The Central Eskimo.* Project Gutenberg Books.
- Bhatt, K. H. (1986). Concept of Health and Disease among the Pnars of Meghalaya. *Tribal Health,* Edited by Buddhadeb Chaudhury, Inter-India Publications, 259-272.
- Bagchi, T. (1990). Health Culture of the Mundas of Narayangarh, Midnapur. *Man and Life, 16* (1&2), 177-182.
- Durkheim, E. (1912). *The Elementary Forms of the Religious Life.* George Allen & Unwin Ltd.
- Clements, F. E. (1932). Primitive Concepts of Disease. *American Archaeology and Ethnology*. University of California Publications, *32*(1), 185-252.
- Evans-Pritchard, E. E. (1937). *Witchcraft, Oracles, and Magic among the Azande*. Oxford: Clarendon Press.
- Elwin, V. (1942). Jungle Medicine, Psycho-Analysis, Auto-Suggestion and Magical Help. *Illustrated Weekly Of India*, April, 12th.
- Elwin, V. (1950). Tribal Religion and Magic in Middle India. *Geographical Magazine*, February, 22nd.
- Elwin, V. (1953a). Tribal Medicine in India. *Statesman*, March, 22nd.
- Elwin, V. (1953b). A Great Tribal Medicine Man. *Statesman*, March, 29nd.
- Elwin, V. (1953c). Folklore and Disease. *Statesman*, April, 5th.
- Frazer, G. J. (1890). *The Golden Bough*. Macmillan And Company.

- Fabrega, H. Jr. (1971b). Medical Anthropology. *Biennial Review of Anthropology*, Stanford University Press, *7*(1), 167-229.
- Feachem, R. (1972). The Religious Belief and Ritual of the Raiapu Enga. *Oceania*, *11*(4), 259-285.
- Foster, G. M., & Anderson, B. G. (1978). *Medical Anthropology.* John Wiley and Sons Inc, 172-.181
- Fabrega, H., & Manning, P. K. (1979). Illness Episodes, Illness Severity and Treatment Option in a Pluralistic Setting. *Social Science and Medicine*, 41-51.
- Foster, G. M. Jr. (1983). *Traditional Cultures respond to Technological Change.* Harper & Bros .
- Hughes, C. (1968). Medical Care Ethnomedicine. *International Encyclopedia of the Social Science,* (Ed.). Sills davied L., The Macmillan Co. and the Free Press, *10*(1), 87-93.
- Jay, E. (1970). A Tribal Village Of Middle India. *Anthropological Survey of India*, 108-127.
- Jaggi, O. P. (1982). *Folk Medicine*. Atma Ram and Sons.
- Joshi, P. C. (1984). *Illness, Health and Culture: Dynamics of Therapy in Central Himalayan Tribe.* PhD Thesis, Department Of Anthropology, Delhi University.
- Joshi, P. C. (1988). Traditional Medical System in Central Himalayas. *The Eastern Anthropologist*, Lucknow University, *41*(1), 77-86.
- Joshi, P. C., & Mahajan, A. (1990). *Studies in Medical Anthropology.* Reliance Publishing House.
- Joshi, P. C. (1994). Tribal Medicine in Indian Context. *Vanyajati*, *42*(3), 3-10.
- Jain, M. K., & Dubey, A. C. (2000). A Study of Traditional Medicine Is The Sour Tribe of Tikamgarh M.P. *Tribal Health Bulletin*, *6*(2), 11-13.

- Joshi, P. C., & Kala, A. K. (Ed.). (2004). The World of Tribal Healers. *Tribal Health and Medicines,* Concept Publications Company.
- Khare, R. S. (1963). Folk Medicine in a North Indian Village. *Human Organization*, *22*(1).
- Kakar, D. N. (1967). *Folk and Modern Medicine: A North Indian Case Study*. New Asian Publisher.
- Kurian, J. C., & Bhanu, B. V. (1980). Ethnomedicine: A Study of the Nomadic Vaidus of Maharashtra. *The Eastern Anthropologist*, *21*(1), 71-78.
- Kleinman, A. (1980). Patients and Healers in the Context of Culture: Exploration of the Borderland between Anthropology. *Medicine and Psychiatry*, University Of California Press.
- Krippner, S. (2003). *Models of Ethnomedicinal Healing.* Ethnomedicine Conferences, 26-27 April And 11-12 October.
- Lieban, R. W., & Clements, F. E. (1973). Medical Anthropology. *In Hand Book of Social and Cultural Anthropology,* Edited By J. J. Honigman, Rand McNally College Publishing Co., 1031-1072.
- Rivers, W. H. R. (1924). *Medicine, Magic and Religion.* Harcourt, Brace